पूज्य लालचंदभाई का प्रवचन
श्री समयसार, गाथा २७८-२७९, ता. ११-४-१९८९
शिकोहाबाद, प्रवचन नंबर P१७

ये समयसार जी शास्त्र है। इसका बंध अधिकार, गाथा २७८-२७९ जोड़ा है, दो गाथा का। ऊपर का एक श्लोक भी है, उसके ऊपर। १७४ नंबर का श्लोक है। वो श्लोक प्रश्नरूप है। उत्तर २७८-२७९ गाथा, वो उत्तररूप लिया है। प्रश्न तो इसमें है, श्लोक में। श्लोक बोलो बेन!

रागादयो बंधनिदानमुक्ता-
स्ते शुद्धचिन्मात्रमहोऽतिरिक्ता: ।
आत्मा परो वा किमु तन्निमित्त-
मिति प्रणुन्नाः पुनरेवमाहुः ।।१७४।।

ये प्रश्न बहुत अच्छा है। शिष्य का प्रश्न है कि **रागादिको बंधका कारण कहा,** राग-द्वेष-मोह का जो परिणाम विकारीभाव कषायभाव है, उसको नया बंध का कारण कहा है। भाव-बंध है, तो भाव-बंध नया कर्म का निमित्तकारण होता है, रागादि। कर्म के बंध का कारण तो कर्म जड़ है। उसका निमित्तकारण राग-द्वेष-मोह है, जो जीव का विकृत परिणाम है। तो रागादि को बंध का कारण कहा और उसके उपरांत, **जिसने** यानि राग-द्वेष-मोह को, मिथ्यात्व के परिणाम को, **शुद्धचैतन्यमात्र ज्योतिसे (-अर्थात आत्मासे) भिन्न कहा;** ये क्या बात है? ये आत्मा ही बंध का कारण है, नया कर्म बंध का कारण। भगवान आत्मा बंध का कारण नहीं है। कभी? कि जब मिथ्यात्व है, तभी। क्या कहा? जब परिणाम में मिथ्यात्व राग-द्वेष-मोह कषायभाव है, तभी भी आत्मा कर्म के बंध का कारण नहीं होता है। किसी को भी, भव्य-अभव्य किसी को भी। तो बंध का कारण कौन? कि राग-द्वेष-मोह बंध का कारण है, ऐसा कहा। ऐसा हमने स्वीकार भी किया, माना।

मगर हमारा एक प्रश्न है कि बाद में आप ऐसा कहते हैं कि जो राग बंध का कारण है, वो राग से शुद्ध चैतन्यमात्र ज्योति से वो तो भिन्न है। राग बंध का कारण और बंध का कारणभूत जो राग, वो राग शुद्धात्मा से भिन्न है, ऐसा कहा आपने। तो **तब फिर उस रागादिका निमित्त आत्मा है या कोई अन्य?** जो राग उत्पन्न होता है, उसका निमित्तकारण आत्मा है कि और चीज़ है राग की? पहले क्या कहा कि राग नया बंध का कारण, उस राग से भगवान आत्मा भिन्न है। वो तो ठीक!

अभी दूसरा प्रश्न आया कि राग उत्पन्न होता है, तो आत्माश्रित होता है कि पराश्रित? राग की उत्पत्ति का निमित्तकारण कौन? आत्मा निमित्तकारण....मिथ्यात्व की उत्पत्ति में मिथ्यात्व का जन्म-स्थान है, तो होता है, मगर उसमें कारण कौन आत्मा कारण है कि दर्शनमोह आदि निमित्तकारण है? ऐसा पूछा। दो प्रश्न आया।

एक तो राग से नया बंध होता है, (ऐसा) एक आपने कहा, वो तो ठीक। स्वीकार किया। अब बाद में आप फ़रमाते हैं कि राग से आत्मा भिन्न है, एक बात। दूसरी बात यह कि जो राग की उत्पत्ति होती है, उसका कारण कौन? यानि नियमरूप कारण कौन? यानि निमित्तरूप कारण कौन? दो प्रश्न

इसमें हैं, गर्भित। प्रश्न तो ऐसा पूछा कि राग का ये निमित्त आत्मा है कि राग का निमित्त परद्रव्य है? ऐसा प्रश्न है। तो राग की उत्पत्ति में निमित्तकारण तो समझे, मगर उसका नियमरूप कारण क्या है, आत्मा है? ऐसा भी प्रश्न गर्भित में आयेगा। खुलासा आयेगा। **आत्मा है या कोई अन्य पदार्थ** (कारण है) राग की उत्पत्ति का? राग निमित्त है, नए कर्म के लिये। वो राग उत्पन्न होता है, वो आत्मा से भिन्न है। तो राग की उत्पत्ति में आत्मा कारण है कि परद्रव्य कारण है और कोई? ऐसा प्रश्न आया।

उसमें नियमरूप कारण क्या? कि जो आत्मा राग का निमित्त हो, मिथ्यात्व का, तो कभी मिथ्यात्व का अभाव हो नहीं और जो नियमरूप कारण कर्म का उदय हो, तो पराधीन पर्याय हो गई। वो भी नियमरूप कारण, निश्चय कारण नहीं है। आहाहा! व्यवहार कारण है मगर निश्चय कारण नहीं है। तो निश्चय कारण कर्म का उदय भी नहीं और आत्मा का अस्तित्व वो भी नियमरूप कारण नहीं है।

मुमुक्षुः- अपने आप सिद्ध होता है।

उत्तरः- उसका राग की उत्पत्ति का, मिथ्यात्व की उत्पत्ति का आत्मा कारण है कि परद्रव्य कारण है, ऐसा प्रश्न आया। **इस प्रकार (शिष्यके) प्रश्नसे प्रेरित हिते हुये आचार्यभगवान पुनः इसप्रकार (निम्नप्रकार) से कहते हैं। उपरोक्त प्रश्नके उत्तररूपमें आचार्यदेव कहते हैंः-**

ज्यों फटिकमणि है शुद्ध, आप न रक्तरूप जु परिणमे।
पर अन्य रक्त पदार्थसे, रक्तादिरूप जु परिणमे ।।२७८।।
त्यों 'ज्ञानी' भी है शुद्ध, आप न रागरूप जु परिणमे।
पर अन्य जो रागादि दूषण, उनसे वह रागी बने ।।२७९।।

गाथा बहुत मार्मिक है। आत्मा शुद्ध है और आत्मा परिणमन नहीं करता है। त्रिकाली शुद्धात्मा राग की उत्पत्ति का कारण नहीं है। और उसका जो परिणमन है, उत्पाद-व्यय, उत्पाद-व्यय, उत्पाद-व्यय, वो भी राग की उत्पत्ति का कारण नहीं है। जो उत्पाद-व्यय राग की उत्पत्ति का कारण हो, तो सिद्ध भगवान में उत्पाद-व्यय होता है, उनमें राग की उत्पत्ति होना चाहिए। भगवान आत्मा भी राग की उत्पत्ति का कारण नहीं और उत्पाद-व्यय, जो पर्याय का स्वभाव है, पर्याय का स्वभाव भी विभाव का कारण नहीं है। ये तो समयसार गूढ़ है, सब इसमें लिखा है। आहाहा!

उसका गाथा का अर्थ- **जेम, जैसे स्फटिकमणि शुद्ध होनेसे**, अनादि-अनंत स्फटिकमणि स्वभाव से शुद्ध ही है। कभी स्फटिकमणि अशुद्ध होती नहीं है। त्रिकाल शुद्ध है, त्रिकाल शुद्ध, एक बात। **शुद्ध होनेसे रागादिरूपसे अपने आप परिणमिता नहीं है**। यानि ये स्फटिकमणि में जो पर्याय लालरूप होती है, वो अपने आप लालरूप होती नहीं है। लाल रंग का कारण स्फटिकमणि का शुद्धस्वभाव नहीं है और उसका परिणमनस्वभाव भी लाल का कारण नहीं है। ये टीका में आयेगा। समझे? आहाहा!

दो कारण का अभाव है। शुद्ध स्फटिकमणि हो तो लाल होता है, ऐसा भी नहीं और उत्पाद-व्यय परिणमन होता है, तो लाल हो जाता है, ऐसा भी नहीं। तो क्या है? कि सामने लाल फूल है, वो उसका निमित्तकारण है। उपादानकारण तो तत्समय की पर्याय (है)। निमित्तकारण, आहाहा! वो जो लाल जो उपादानकारण हुआ....वो तो निमित्तकारण (है), लाल फूल तो। लाल फूल तो निमित्तकारण (है)। मगर उसका जो क्षणिक-उपादान लाल रंग हुआ ना, पर्याय में लाल रंग। एक तो लाल रंग फूल में

है और ये लाल (रंग) इधर आया। तो ये जो लाल रंग आया, पर्याय का दोष, पर्याय में, तो उसका नियमरूप कारण क्या है? कि स्फटिकमणि अपने पर्यायस्वभाव से च्युत हो गयी। पर्याय में जो सफेदरूप परिणमन करती थी, वो लालरूप से परिणमन करती है। आहाहा! ऐसा आता है। आयेगा।

परन्तु, अन्य रक्तादि द्रव्योंके द्वारा वह रक्त (-लाल) आदि लिया जाता है, इसीप्रकार ज्ञानी अर्थात् आत्मा, ज्ञानी का अर्थ आत्मा। ज्ञानी का अर्थ आत्मा। जो ज्ञानी आता है ना बहुत बार, ज्ञानी। आहाहा!

मुमुक्षुः- सातवीं गाथा में आता है

चारित्र, दर्शन, ज्ञान भी, व्यवहार कहता ज्ञानिके।

उत्तरः- अमितगति आचार्य में आता है ना? ज्ञान से जानता ज्ञानी, जानने में आ जाता है। ज्ञान अर्थात् आत्मा। ये इधर से निकला, ज्ञानी अर्थात् आत्मा। **ज्ञानी अर्थात् आत्मा शुद्ध होनेसे,** त्रिकाल शुद्ध है आत्मा तो, कभी अशुद्ध होता नहीं है। **होनेसे, रागादिरूप अपने आप परिणमता नहीं है।** अकेला-अकेला आत्मा है और रागरूप से परिणमित होता है, मिथ्यात्वरूप से परिणमित होता है, ऐसा होता नहीं। तो-तो वो स्वभाव हो जाए और पर (द्रव्य) परिणमित करावे, तो-तो पराधीन हो जाए। ऐसा भी नहीं है। आयेगा, बहुत मार्मिक बात है। मार्मिक बात है! आहाहा!

उत्पाद-व्यय राग का कारण नहीं और ध्रुव भी राग का कारण नहीं है। आहाहा! निमित्तकारण नहीं है। समझे? शुद्धभाव रागादिरूप अपने आप (परिणमता नहीं है), यहाँ निमित्त सिद्ध करना है। **अपने आप** आहाहा! **परिणमता नहीं है, परंतु अन्य रागादि दोषोंके द्वारा वह रागी आदि किया जाता है।** निमित्तरूप, निमित्तकर्ता, निमित्त, आहाहा! निमित्तकर्ता तो कर्म का उदय, उपादानकर्ता राग की तत्समय की पर्याय। वो रागरूपी परिणमन होता है, उसमें निमित्तकारण तो कर्म है। पर राग की उत्पत्ति का मूल कारण क्या है? कि अपने स्वभाव से च्युत हो गया, वो राग की उत्पत्ति का नियमरूप कारण है। अपने स्वभाव को भूल गया। समय-समय जाननेवाला जानने में आता है, तो भी मेरे को जानने में आता नहीं है। वो च्युत हो गया, आत्मा। आत्मा स्वभाव से च्युत हो गया, तो राग की उत्पत्ति का नियमरूप कारण (स्वभाव से च्युत होना) है और निमित्तकारण वो है। निमित्तकारण कर्म का उदय है। आयेगा सब, खुलासा इसमें आयेगा।

मुमुक्षुः- नई बात आई।

टीकाः- आहाहा! नई बात आई। नई बात है। भाई साहब! समझने जैसी बात है। आहाहा! माल भरा है। आहाहा! जो परिणमनस्वभाव हो तो बंध का कारण हो, तो सिद्ध में होना चाहिए और परिणमनस्वभाव जो सरखा (एक जैसा) हो, तो सरखा (एक जैसा) बंध होना चाहिए। आत्मा भी कारण नहीं और परिणमनस्वभाव भी कारण नहीं। आहाहा! और कर्म का उदय तो व्यवहार निमित्तकारण है। वो निश्चय कारण नहीं है। उसमें से निकलता है। द्रव्य की चर्चा.... इसलिए लिया।

इस रीति से वास्तवमें केवल स्फटिकमणि (-अकेला) स्फटिकमणि पड़ा है। अकेला-अकेला लालरूप से परिणमता नहीं है। **स्वयं परिणमनस्वभाववाला होने पर भी,** देखो! दो लिया। दो लिया कि नहीं? वो टीकाकार ने निकाला, उसमें से। मूल में नहीं है, परिणमनस्वभाव मूल में नहीं है। इसमें ये आता है। आहाहा! उत्पाद-व्यय तो स्वभाव है, पर्याय का। दोष नहीं है। उत्पाद-व्यय तो

स्वभाव है। ध्रुव भी स्वभाव है और उत्पाद-व्यय भी स्वभाव है। आहाहा! उत्पाद-व्यय में जो उपाधि आती है, वो बंध का कारण है। वो बंध का कारण, एक निमित्तकारण और एक च्युत होता है, दो बंध का कारण।

मुमुक्षुः- स्वभाव-विभाव वही हुआ?

उत्तरः- हाँ! वही हुआ। वो ही पर्याय, पर्याय। बस। **परिणमनस्वभाववाला होने पर भी,** दो बात ली। **अपनेको शुद्धस्वभाववाला होने से...** स्फटिकमणि तो शुद्ध है। उसका स्वभाव अशुद्ध होना नहीं है। अशुद्ध पर्याय में अशुद्ध होना, वो उसका कारण नहीं है। अशुद्ध का कारण शुद्ध नहीं होता है। पर्याय में लाल रंग होता है ना, नैमित्तिक, वो नैमित्तिकभाव का कारण निमित्त है। नैमित्तिक का कारण त्रिकालस्वभाव भी नहीं है और परिणमनस्वभाव भी नहीं है। त्रिकालस्वभाव तो नहीं मगर वो परिणमन स्वभाव, उत्पाद-व्यय, वो भी राग का कारण नहीं है। आहाहा!

अपने शुद्धस्वभाव के कारण भी रागादिरूप परिणमित नहीं होने से राग की उत्पत्ति में ये स्फटिकमणि भी निमित्त नहीं और उसका उत्पाद-व्यय निमित्तकारण नहीं है। आहाहा! तो निमित्तकारण कौन? ऐसा प्रश्न आयेगा। अर्थात् **स्वयं अपनेको लालाई-आदिरूप परिणमनका वो निमित्त नहीं होनेसे,** नहीं तो-तो स्वभाव हो जायेगा। स्फटिक अपने आप अकेला-अकेला लालरूप में परिणमे, तो-तो वो स्वभाव हो जायेगा। तो कभी स्वभाव और विभाव का अभाव होता नहीं है। विभाव में निमित्तकारण है, दूसरा। नैमित्तिक में निमित्त है, स्वभाव में निमित्त नहीं होता है। त्रिकालस्वभाव में निमित्त नहीं और उत्पाद-व्यय का निमित्त कोई जगत में नहीं होता है।

निमित्त तो नैमित्तिक में, निमित्त का भाव आता है। नैमित्तिक कब होता है? कि अपने स्वभाव से च्युत हो, तब। मार्मिक गाथा है! बंध सिद्ध करने की गाथा है। बंध, बंधतत्व। ये बंध अधिकार है ना। आहाहा! मिथ्यात्व सिद्ध करने की गाथा है। मिथ्यात्व का ख्याल आ जाये, तो मिथ्यात्व चला जाये। मिथ्यात्व की उत्पत्ति का कारण ख्याल में आवे, तो मिथ्यात्व की उत्पत्ति होती नहीं है। मिथ्यात्व की उत्पत्ति क्या? मूल कारण क्या, दर्शनमोह तो निमित्तकारण है। मूल तो इधर से होती है मिथ्यात्व की उत्पत्ति। तो मिथ्यात्व की उत्पत्ति का कारण क्या है? कि जो अपने ज्ञान में ज्ञायक भगवान आत्मा जानने में आने पर भी, मैं आत्मा को नहीं जानता हूँ, वो मिथ्यात्व का कारण, नियमरूप कारण हो गया। तब दर्शनमोह का निमित्तकारण कहलायेगा।

अकेला-अकेला आत्मा मिथ्यात्वरूप से परिणमता नहीं और उसका उत्पाद-व्ययरूप भी कारण नहीं है। और दर्शनमोह का उदय, वो तो निमित्तकारण है, वो तो बहिरंग कारण है। अंतरंग कारण क्या है? कि स्वभाव से च्युत हो गया। स्वभाव से च्युत होकर ज्ञाता होने पर भी, कर्ता मानता है। ज्ञाता होने पर भी अपने आप (को) कर्ता माना, वो स्वभाव से च्युत हो गया। वो नियमरूप कारण हुआ। उसमें अपवाद नहीं (है)। कर्म का उदय होने पर भी, आत्मा वहाँ से हटकर आत्मा में जा सकता है, तो उदय, निमित्तकारण, नियमरूप नहीं रहा राग की उत्पत्ति में।

जयसेनाचार्य भगवान ने लिखा है, कहा है कि कर्म का उदय नियमरूप कारण नहीं है। शुद्धस्वभाव से च्युत होना नियमरूप कारण है। इसमें अपवाद नहीं है। अपने को भूल गया। स्वभाव से

च्युत हो गया। मैं ज्ञाता हूँ, माना कर्ता, स्वभाव से च्युत हो गया, ज्ञाता नहीं रहा। मैं ज्ञाता हूँ (ऐसा) होना चाहिए, रहना चाहिए। मगर मैं कर्ता हूँ, आहाहा!

अर्थात् स्वयं अपने को ललाई आदिरूप परिणमन का निमित्त न होने से, अपने आप रागादिरूप नहीं परिणमता, स्फटिकमणि की बात चलती है, **परंतु जो अपने आप रागादिभाव को प्राप्त होने से,** आहाहा! दूसरा पदार्थ लिया अभी, नैमित्तिक। पर्यायस्वभाव से च्युत होता है, तो नैमित्तिक पर्याय होती है। नैमित्तिक होती है, तो उसमें निमित्तकारण आत्मा नहीं होता है और परिणमन भी निमित्त नहीं है। परद्रव्य निमित्त होता है। आहाहा! दो निमित्त का निषेध किया। त्रिकालस्वभाव निमित्त नहीं होता है और उत्पाद-व्यय भी निमित्त नहीं होता है। आहाहा! और नैमित्तिक होता तो है और उसमें कर्म के कारण से राग होता है, ऐसा भी नहीं है। और नैमित्तिक हो भी, हुआ तो सही। तो उसका नियमरूप कारण कहो, (तो) कि ज्ञाता होने पर भी कर्ता मानता है। आहाहा! अकर्ता होने पर भी कर्ता मानता है। अपने उपयोग में भगवान आत्मा जानने में आ रहा है, उसका निषेध करता है कि मैं आत्मा को जानता नहीं हूँ। वो स्वभाव से च्युत हुआ, तो बंध हो गया। मिथ्यात्व की पर्याय प्रगट हो गई। मिथ्यात्व की पर्याय प्रगट हुई, तो दर्शनमोह का, कर्म का निमित्तकारण कहा जाता है। इधर से शुरू होता है, इधर से। वहाँ से नहीं होता है। कर्म के उदय से शुरूआत नहीं होती है। इधर से शुरू होता है। बंध की शुरुआत भी इधर से, मोक्ष की शुरुआत भी इधर से। नीलम! आहाहा!

मुमुक्षुः- बहुत अच्छा!

मुमुक्षुः- स्वभाव से च्युत होना, माने ज्ञाता को कर्ता मानना?

उत्तरः- ज्ञाता को कर्ता माना तो बंध हो गया, मिथ्यात्व हो गया। आहाहा! शुद्ध को अशुद्ध मानना, परिपूर्ण को अपूर्ण मानना, अबंध को बंध मानना, ये स्वभाव से च्युत हो गया। आहाहा! जैसा स्वभाव है, वैसा नहीं मानना, उसका नाम भाव-बंध है। वो भाव-बंध होता है, तो निमित्तकारण होता है। भाव-बंध नहीं हो, तो निमित्त का प्रश्न ही नहीं होता (है)।

मुमुक्षुः- स्वभाव में निमित्त नहीं होता है।

उत्तरः- स्वभाव में निमित्त नहीं होता है। विभाव में निमित्त होता है। वो विभाव में निमित्त होने पर भी, वो जो नैमित्तिक कर्म का उदय, वो नियमरूप कारण नहीं है। नियमरूप कारण स्वभाव से च्युत होना है। आहाहा!

मुमुक्षुः- तजे शुद्धनय बंध, ग्रहे शुद्धनय मोक्ष।

उत्तरः- वो, बस वो। वो बात चलती है।

मुमुक्षुः- स्वभाव से च्युत होना, वो ही विभाव का नियमरूप कारण है।

उत्तरः- बस, नियमरूप कारण, विभाव हो गया। जब विभाव हो गया, तो विभाव में परपदार्थ निमित्त (होता है)। **'पर संग एव'** परपदार्थ निमित्त होता है, आत्मा निमित्त नहीं होता है। विभाव में आत्मा निमित्त नहीं होता है और विभाव की उत्पत्ति का नियमरूप कारण कर्म का उदय भी नहीं है। स्वभाव से च्युत होना नियमरूप कारण है। इसमें है सब।

किन्तु जो अपने आप रागादिभावको प्राप्त होनेसे, स्फटिकमणिको रागादिका निमित्त

होता है, रागादि की लाल पर्याय होती है ना, उसका निमित्तकारण कौन? कि जो स्वयं, फूल, फूल अपने आप अपने स्वभाव से लाल है। वो तो लाल उसके स्वभाव से है। वो तो उसका स्वभाव है। इधर का लाल, वो तो विभाव है। उधर का लाल, (वो तो) स्वभाव है। इधर का लाल विभाव है। तो, इधर का लाल विभाव हुआ, उसका नियमरूप कारण (वो) नहीं है। वो कारण हो तो (हमेशा) लाल ही होना चाहिए। होता नहीं है। समझे? और जो लाल पर्याय उत्पन्न होती है, उसका निमित्तकारण लाल फूल है, मगर उपादानकारण कौन? कि ये तत्समय की पर्याय। और पर्याय का कारण पर्याय नहीं है। अपने स्वभाव से च्युत हुआ, वो कारण है। सूक्ष्म है!

मुमुक्षुः- पर ख्याल में आवे, ऐसा सूक्ष्म है।

उत्तरः- हाँ! ख्याल में आवे। बराबर ख्याल में आवे, बुद्धिगम्य है।

जैनदर्शन आगम से, युक्ति से, अनुमान से, अनुभव से सिद्ध होता है। ऐसा हम कहें और तुम मान लो आचार्य भगवान 'ना' कहते हैं। मैं कहूँगा, मगर तू अनुभव से प्रमाण करना। मैं तो कहूँगा कि शक्कर मीठी है। मीठी कुछ बोलते हैं ना? मीठी है। मगर शक्कर मीठी है, ऐसे नहीं मानना। जीभ पर चखकर परीक्षा करके प्रमाण करना। नहिंतर तो कोई फिटकरी दे दे, तो वो फिटकरी को शक्कर मान लेगा। मगर जीभ पर रखने के बाद... फिटकरीवाला बेचने आवे, शक्कर के भाव में, ठहरो! ठहरो! चख लूँ। अरे भाई! चखने की ज़रूरत नहीं है। जो कहो तो मानता है, (क्योंकि अगर) चख ले, तो लेगा नहीं। फिटकरी (ही ले लेगा)। समझे? आहाहा! चखने की क्या ज़रूरत है? जैसे शक्कर तो सफ़ेद है, (ऐसे ही) ये भी सफेद है। नहीं! वो सफ़ेद लक्षण नहीं है। अतिव्याप्ति दोष है उसमें। आहाहा! मैं बहुत प्रयोग नहीं करता, अव्याप्ति-अतिव्याप्ति-असंभव का। सादी भाषा (बोलता हूँ) एकदम।

मुमुक्षुः- समझ में आती है।

उत्तरः- समझ में आती है। एक भाई ने मेरे को कहा, मैं बहुत खुश-खुश हो गया। युगल जी साहब बैठे थे। एक भाई आया, उसने कही अपनी बात। अपनी बीती कथा कही, आप-बीती। तो उसने कहा कि भाई! मैंने यहाँ आने का प्रोग्राम बना लिया, भिण्ड में। मगर एक भाई ने कहा कि वहाँ जाने जैसा ही नहीं है, क्योंकि लालचंदभाई की बात तो एकदम सूक्ष्म इतनी आती है कि कोई समझ नहीं सके। तू तो, तेरी ताकत नहीं है। या तो तेरे को नींद आयेगी सुनते-सुनते, और या फिर दूसरे दिन भाग जायेगा। अच्छा! उसने तो निर्णय किया था कि मेरे को जाना है। समझे? आया। सुनते-सुनते, सुनते-सुनते, आहाहा! (भाव) विभोर हो गया। आहाहा! बाद में आया। मैं तो भाईसाहब! आज मेरे घर में आ गया। सब बात मेरे पल्ले पड़ गई। कोई नहीं समझ में आवे, ऐसी कोई कड़क भाषा, कोई संस्कृत भाषा, कोई माघदी भाषा, कोई व्याकरण, कोई अतिव्याप्ति, असंभव दोष, कोई नहीं। अनेकांतिक, हेत्वाभास, ये विचार आता है, कोई दोष की बात नहीं है। इधर गुणी और गुण की बात है। सब हमने पढ़ा है, सब पढ़ा है। सब जानते हैं। नहीं जानते हैं, ऐसा नहीं। पर प्रयोग नहीं करते। प्रयोग (नहीं करते)। सामान्य जन समुदाय को ख्याल में नहीं आता। अभ्यासी को तो ख्याल में आवे।

मुमुक्षुः- उसने सुनी नहीं है, तो उसे नींद ही आती थी। यहाँ सही समझानेवाला कोई नहीं था, इसलिए उसे नींद ही आती थी, अध्यात्म की बात सुनने में। लेकिन जब से सुनी है, तो आनंद से (भाव)

विभोर हो गया।

उत्तर:- अपनी बात है ना, विकथा तो नहीं है। विकथा की तो मना है। वहाँ बोर्ड लगा था, मैंने तो पढ़ा। आहाहा! नहीं समझ में आवे, ऐसी बात नहीं है। आत्मा सर्वज्ञत्व-शक्ति से भरा हुआ है। अनंत-अनंत शक्ति से विराजमान आत्मा है। (अनंत) शक्ति सम्पन्न है। अपनी बात समझ में नहीं आवे? आहाहा! अपने बैंक-बैलेंस में कुछ किसी को पूछना पड़े? अपने बैंक-बैलेंस में किसी को पूछे, तो भाई तेरी बैंक-बैलन्स है। किसी और के (बैंक-बैलन्स) का पूछे तो तकलीफ़ (है)। मैं क्या हूँ, उसको जानने में क्या तकलीफ़? आहाहा!

किन्तु जो अपने आप रागादिभावको प्राप्त होनेसे, स्फटिकमणिको रागादिका निमित्त होता है ऐसे परद्रव्यके द्वारा ही, शुद्धस्वभावसे च्युत होता हुआ ही, देखो! आहाहा! मैन चीज़ वो है। स्फटिकमणि अपने स्वभाव से यानि पर्यायस्वभाव से च्युत होता है। द्रव्यस्वभाव से कभी च्युत होता नहीं है। क्या कहा? अपना जो त्रिकाली शुद्धस्वभाव सामान्य स्फटिकमणि का, उसका अभाव होकर लाल होता नहीं है। मगर पर्याय में जो स्वच्छता है, उस स्वच्छता को स्वयं छोड़ देता है। वो त्रिकाली जो शुद्ध है स्फटिकमणि, वो उसको छुड़ाता नहीं है और पर भी उसको छुड़ाता नहीं है। वो पर्याय की योग्यता से स्वयं स्वच्छता को छोड़कर लाल रंगरूप परिणमती है। आहाहा! तो स्वभाव से च्युत हो गई, वो पर्याय। पर्याय अपने स्वच्छ स्वभाव से च्युत हो गई। यानि जो पर्याय का संबंध शुद्ध स्फटिकमणि के साथ था, वो संबंध तोड़ दिया, तो शुद्धि आ गई। क्या कहा? उसका संबंध हुआ, तो (इधर) लाल हुआ, ऐसा नहीं है। इसके साथ संबंध पर्याय का था, उसने तोड़ दिया। तोड़ दिया, तो वहाँ जोड़ दिया, तो (यहाँ) लाल हो गया। इधर तोड़ा तो लाल हुआ, बाद में वो जोड़ा, (ऐसा) कहा जाता है।

जो पर्याय स्वच्छ थी, वो स्वच्छ पर्याय, स्फटिकमणि के साथ संबंध रखती थी। समझे? स्वतंत्र है ना, स्फटिकमणि की पर्याय भी स्वतंत्र है ना। उसके साथ संबंध स्फटिकमणि (का), शुद्धता के साथ संबंध था। वो संबंध पर्याय ने, वहाँ से च्युत हो गई, खिसक गयी, हट गई, अभेद में भेद कर दिया। अभेद में भेद कर दिया। स्फटिकमणि और स्फटिकमणि की पर्याय, एक स्फटिकमणि ही था, अभेद ही था। वहाँ से वो छूटी हो गई, वहाँ से छूट गई। समझे? हट गई। वहाँ से पर्याय हट गई और वहाँ (ललास से) से जुड़ गई, तो लालरूप में परिणमती है पर्याय। इधर से हटी, तब लाल हुआ। लाल जब हुआ, तो वहाँ जुड़ती है। इधर से संबंध तोड़ा, उससे संबंध जोड़ा। मगर वहाँ से संबंध जोड़ा, वहाँ से नहीं लेना। इधर से संबंध तोड़ा, वहाँ से लेना। ये मूल कारण है। ये गाथा सरस है। स्वभाव से च्युत हुआ, आहाहा! इसका अर्थ है।

मुमुक्षु:- है तो ऐसा अभेद ही स्वभाव उसका, लेकिन वो अभेद स्वभाव को छोड़कर भेद में आ गई। यहाँ से छूटी पड़ी।

उत्तर:- हाँ! यहाँ से ज़रा छूटी पड़ी, तो कहीं तो जुड़ेगी ना।

मुमुक्षु:- क्योंकि पर्याय किसी न किसी से तो अभेद रहेगी ही।

उत्तर:- हाँ! यहाँ से अभेद हुई, यहाँ से छूटी, तो फूल के साथ अभेद हो गयी। तो लाल रंगरूप से परिणमित हो गयी। ये अभी सिद्धांत में आयेगा। अभी स्फटिकमणि की बात चलती है।

स्फटिकमणि में तो ज्ञान नहीं है, तो जोड़ना-तोड़ना, वो बात तो एक सामान्य समझाने के लिये। इधर से तोड़ना वहाँ से जोड़ना, उसमें तो नहीं है। मगर ज्ञान की पर्याय में तो तोड़ना और जोड़ना बन जाता है। इधर से तोड़ना, वहाँ से जोड़ना, संसार हो गया खड़ा। अभी सिद्धांत में आयेगा। सिद्धांत में सब आयेगा।

मुमुक्षुः- जल्दी फ़रमाओ सिद्धांत।

उत्तरः- छटपटी होती है ना।

शुद्धस्वभावसे च्युत होता हुआ ही, रागादिरूप परिणमित किया जाता है। यहाँ कहा ना, शुद्धस्वभाव से च्युत हो गया, स्फटिकमणि का बिम्ब। उसकी जानकारी नहीं है, ज्ञान नहीं है, तो भी च्युत होता है। जैसे जल है ना, जल, गरम होता है ना, तो शीतल स्वभाव से च्युत हो गई पर्याय। शीतल स्वभाव का संबंध तोड़ा और अग्नि का संबंध जोड़ा, तो उष्ण हुआ। वहाँ से संबंध जोड़ती नहीं है पर्याय, इधर से तोड़ती है पहले।

मुमुक्षुः- अग्नि के संग से गरम नहीं हुई।

उत्तरः- ना! ना! बिल्कुल नहीं। वो तो सेकेंडरी है, वो तो सेकेंडरी है। आहाहा! पानी के द्रष्टांत से, समझ में आया? आहाहा! शीतल स्वभाव पानी (का) था, दल। उसकी पर्याय भी शीतल थी। और शीतल जो पर्याय थी, वो शीतल स्वभाव से हट गई, खसक गई, तोड़ दिया संबंध। संबंध तोड़ा, तो अग्नि में जोड़ा, तो उष्ण हो गया। तो उष्ण का मूल कारण अग्नि नहीं है। अपना संबंध तोड़ना, स्वभाव से, त्रिकालस्वभाव से संबंध तोड़ना, पर के साथ संबंध जोड़ना, आहाहा! वो ही उष्ण की पर्याय का कारण नियम है।

उस रीति से, उस रीति से **वास्तवमें**.... गहराई में चली गयी। ऐसा विषय, अद्भुत, समयसार तो लगे हमको प्यारा। पूरा ब्रह्माण्ड इसमें भरा है। जितनी ताकत, इसमें से निकाल सके। आहाहा! पैंतीस साल पहले मैं ईसरी गया था। तब गणेशप्रसाद जी वर्णी को १९ प्रश्न किए थे। बाद में, वो आहार के लिये चले गए। बाद में पाँच-सात पंडित त्यागी वहाँ बैठे थे। मैंने कहा कि ये राग की उत्पत्ति का नियमरूप कारण क्या है? बताओ। (तो कहा) कि कर्म के उदय से राग होता है। नहीं! नियमरूप कारण नहीं है वो। राग की उत्पत्ति का नियमरूप कारण कर्म का उदय हो, तो-तो पराधीन हो गई पर्याय। स्वाधीन रही नहीं। बहुत चर्चा हुई मगर किसी से जवाब नहीं आया। बाद में एक पंडित आया, भाईसाहब! आप कहो ना क्या नियमरूप कारण? स्वभाव से च्युत होना नियमरूप कारण है। स्वभाव को भूल जाना, अपने को आप भूलकर हैरान हो गया। आहाहा! जे स्वरूप समज्या बिना पाम्यो दुःख अनन्त। अनंत दुःख का कारण अपने स्वभाव को भूल गया। ज्ञाता को कर्ता माना, अबंध को बंध माना। आहाहा।

इसीप्रकार वास्तवमें केवल (-अकेला) आत्मा, अकेला, एक आत्मा, एकाकी, एकाकी है। पर का संग नहीं है उसको। कभी हुआ (भी) नहीं है। **स्वयं परिणमन-स्वभाववाला होने पर भी,** एक तो अकेला है और उसका परिणमनस्वभाव भी है, तो भी वो मिथ्यात्व का कारण होता नहीं है। आहाहा! बंध कहो कि मिथ्यात्व कहो। आहाहा! **अपनेको शुद्धस्वभावपनेके कारण** आत्मा तो

त्रिकाल शुद्ध है। वो अशुद्धता का कारण होता नहीं है। **के कारण रागादिका निमित्तपना नहीं होनेसे,** राग का निमित्तकारण वो नहीं है। राग का निमित्तकारण आत्मा हो तो, आत्मा तो त्रिकाल है। त्रिकाल रहनेवाला है। तो रागी होने लगे। तो आत्मा राग का कारण नहीं है। राग का उपादानकारण भी आत्मा नहीं है और निमित्तकारण भी आत्मा नहीं है और उसका उपादानकारण उपादेय भी नहीं है।

परिणमनस्वभाव, परिणमनस्वभाव तो सब में है। तो सब में एक जैसा मिथ्यात्व होना चाहिए। परिणमनस्वभाव नहीं है। आहाहा! **अपनेको शुद्धस्वभावत्वके कारण रागादिका निमित्तत्व न होनेसे, (स्वयं अपनेको),** स्वयं अपने को, अपने आप, **अपने आप रागादिरूप परिणमन का निमित्त न होनेसे, अपने आप ही** यानि अपने-अपने अकेले-अकेले....सूर्यकांत मणि का द्रष्टान्त देते हैं। आहाहा! आगे आयेगा। **स्वयं अपनी,** अपने-अपने अपने आप आहाहा! **अपने आप रागादिरूप परिणामता नहीं।** आत्मा मिथ्यात्वरूप से अकेला-अकेला (अपने आप) परिणमन नहीं करता है। उसमें परसंग से उत्पन्न होता है। मगर परसंग निमित्तकारण है। निमित्त का प्रश्न पूछा। निमित्त का कारण पूछने पर उसको उपादानकारण लगा दिया, शुद्धस्वभाव से च्युत हुआ, इधर से तोड़कर संबंध उधर से (जोड़ा)।

क्या किया? कि उपयोग में आत्मा जानने में आने पर भी, उपयोग में प्रत्येक जीव को प्रत्येक समय पर, भगवान आत्मा जानने में आने पर भी, वो उपयोग में आत्मा जानने में नहीं आता है। ऐसा माना, तो ज्ञान ने ज्ञायक से अभेद होने पर, वहाँ से संबंध तोड़ दिया। द्रव्य के साथ पर्याय का संबंध समय-समय तोड़ता है। समय-समय तोड़ता है और पर से जोड़ता है। समय-समय अभेद होने पर भी भेद करके तोड़ता है। आहाहा! उपयोग में आत्मा जानने में आने पर भी, समय-समय पर, मेरे को.... वो तो ज्ञानी को आत्मा जानने में आ रहा है, हम तो अज्ञानी हैं। ऐसा है नहीं। प्रत्येक जीव को प्रत्येक समय पर अपना भगवान आत्मा जानने में आ रहा है। 'ना' बोले तो भी जानने में आ रहा है, 'हाँ' बोले तो भी (जानने में आ रहा है)। आहाहा! तो ऐसे अपनी ज्ञान की पर्याय में ज्ञायक आत्मा जानने में आ रहा है। वो अभेदरूप जानने में आ रहा है। वो भी अभेदरूप, अनन्यरूप जानने में आ रहा है। ज्ञान की पर्याय उधर और ज्ञायक इधर, वो ज्ञान की पर्याय इसको जानता है - ऐसा नहीं है, ऐसा नहीं है। वो उपयोग आत्मा से अनन्य है। आत्मा से अनन्य होकर अनन्यरूप जानता है। ऐसा अनन्य स्वभाव होने पर भी, उसको पर्याय को वो भेद करके तोड़ देता है संबंध कि, पर जानने में आता है। तो स्व जानने में आने पर भी संबंध तोड़ा, इधर, और पर के साथ संबंध जोड़ा कि पर जानने में आया, उसका नाम अज्ञान है, मिथ्यात्व है। आहाहा!

अभेद में भेद करे, तो इधर से संबंध टूटता है और पर के साथ संबंध जुड़ता है। अभेद में अभेद नहीं रहता है आत्मा, तो (ऐसा होता है)। अभेद ही रहता है, उपयोगमयी आत्मा है। उपयोग में उपयोग है, उपयोग में राग है नहीं। उपयोग में जो उपयोग दिखाई देवे, तो सम्यग्ज्ञान है और उपयोग में राग दिखाई देवे, तो मिथ्याज्ञान हो गया। इधर से संबंध तोड़ दिया ना। यानि राग जानने में आता है इसलिए बंध नहीं। आत्मा को नहीं जानता है, इसलिए बंध है। क्या कहा? क्योंकि उसमें नियम नहीं रहा। क्योंकि ज्ञानी तो राग को जानता है, तो भी बंध होता नहीं है। क्योंकि स्वभाव से च्युत होता नहीं

है। राग जानने में आता है, तो भी बंध होता नहीं है। आता है ना ७५ वीं गाथा में, रागी तो पुद्गल है। जाना कि नहीं उसने? तो राग को जानने से भाव-बंध होता नहीं है। अपने स्वभाव से च्युत होता है, तो भाव-बंध होता है। (यह) मूल बात है। आहाहा!

मुमुक्षुः- ज्ञेयाकार अवस्था में ज्ञायक जानने में आता है, इसलिए बंध होता नहीं।

उत्तरः- बंध होता नहीं।

और ज्ञायक जानने में नहीं आता है मुझे, इसलिए बंध हो गया। अभी ज्ञायक जानने में आता नहीं, तो सेकन्डेरी में क्या आया? कि पर जानने में आता है। तो पर जानने में आता है, जिससे बंध होता है - ये निमित्त-प्रधान कथन है। उपादान-प्रधान कथन तो यहाँ से (जो) छूटा, ये बंध का कारण है। ये संध्या का घर है ना। आहाहा! शिकोहाबाद भाग्यशाली है, संध्या का घर है।

क्या कहते हैं? फ़रमाते हैं। आहाहा! शुद्धस्वभाव से च्युत बस, ये नियमरूप कारण हुआ। पर को जानने से बंध होता नहीं है क्योंकि व्यवहारनय जाना हुआ प्रयोजनवान है, तो बंध होना चाहिए। पर को जानने से बंध नहीं होता है। स्व को नहीं जानने से बंध होता है। स्व को नहीं जानना वो बंध का कारण, निमित्त हुआ। तो पर को जानने से बंध होता (है), अध्यवसान होता है। धर्मास्तिकाय को जानने से अध्यवसान होता है, वो दूसरी बात है। वो धर्मास्तिकाय को जब जानते हैं, तब अपने को जानने को भूल गया, वो मिथ्यात्व का नियमरूप कारण है। वो तो निमित्तकारण है।

मुमुक्षुः- निमित्ताधीन बुद्धि हट गई वहाँ से।

उत्तरः- आहाहा! सब गुरुदेव का प्रताप है। **अपनेको शुद्धस्वभावत्वके कारण रागादिका निमित्तत्व न होनेसे,** आहाहा! अकेला-अकेला आत्मा राग का निमित्तकारण हो, तो मिथ्यात्व होना ही (चाहिए), अनादि-अनंत, छूटे ही नहीं। और (जो) कर्म के उदय से मिथ्यात्व हो, तो पराधीन हो जाये। और परिणमनस्वभाव मिथ्यात्व हो, तो परिणमनस्वभाव तो स्वभाव है। वो तो सिद्ध में भी है। आहाहा! त्रिकालस्वभाव कारण नहीं, उत्पाद-व्यय कारण नहीं, परपदार्थ भी नियमरूप कारण नहीं। कारण है, मगर नियमरूप नहीं। कारण तो है, निमित्तकारण।

मुमुक्षुः- नहीं, कारण नहीं। यहाँ तो इस नियमरूप कारण की बात आई।

उत्तरः- हाँ! अभी एजेंडा पर ये है, नियमरूप कारण। राग से बंध होता नहीं, जानने से। होता है? (नहीं।) आहाहा! स्वभाव से च्युत हुआ, तो बंध हो जाता है। बस।

मुमुक्षुः- जिसको नियमरूप कारण का पता (है), उसको ही निमित्तकारण का पता (है)।

उत्तरः- हाँ! वो ही निमित्तकारण को जानता है। निमित्तकारण कौन जानता है? कि जो नियमरूप कारण जानता है। ये लिखा है ना कि, **शुद्धस्वभावसे च्युत होता हुआ,** वो जानता है उसने लिखा। कोहिनूर का हीरा रख दिया। आहाहा!

मुमुक्षुः- और इस मूल कारण की खबर पड़े, तो ये बंध रहे ही नहीं।

उत्तरः- अरे! मेरे ज्ञान में आत्मा जानने में आ रहा है, मैं 'ना' कैसे कहूँ? 'ना' कहूँ तो-तो मिथ्यात्व का दोष आ जाये। पर को जानता है इसलिए मिथ्यात्व है, वो नियम नहीं। इधर (स्व) को नहीं जाना, तो अध्यवसान हुआ। और अध्यवसान कब हुआ? कि पर को जानने से हुआ। वहाँ से समझाया

जाता है। है तो मूल उद्गम स्थान यहाँ। उद्गम स्थान तो अंदर में है। शॉर्ट में कहना पड़े कि धर्मास्तिकाय को जानता हूँ, तो अध्यवसान हो गया। मगर अध्यवसान का मुख्य (मेन) कारण तो अपने स्वभाव से च्युत हुआ। जाननहार को नहीं जाना और जो, जिसका ज्ञान नहीं है, उसको जानने में गया। इधर से छूटा और वहाँ से जुड़ा, तो बंध हो गया। बराबर! निमित्तकारण की सिद्धि करते-करते भी शुद्धस्वभाव से च्युत होता है।

मुमुक्षुः- मूल कारण ले लिया।

उत्तरः- मूल कारण ले लिया। आहाहा! ये तो समयसार है। ये तो समयसार है। आहाहा! गूढ़ है। गुरुगम से जानने में आता है, योग्यता। श्रीमद् जी ने लिखा है कि द्रव्यानुयोग अति सूक्ष्म है और (वो) अपनी योग्यता और गुरुगम से ख्याल में आता है।

जिनप्रवचन गुरुगम्यता, थाके अति मतिमान ;
अवलंबन श्री सद्गुरु, सुगम अने सुखखाण .४

आगम का मर्म ज्ञानी के हृदय में है।

अपनेको शुद्धस्वभावत्वके कारण रागादिका निमित्तत्व न होनेसे (स्वयं अपनेको रागादिरूप परिणमनका निमित्त न होनेसे) अपने आप ही रागादिरूप नहीं परिणमता। आहाहा! राग का निमित्तकारण आत्मा भी नहीं और परिणमनस्वभाव भी नहीं। और कर्म का उदय नियमरूप कारण (नहीं), ये तो निमित्तकारण है। तो नियमरूप कारण कौन? कि शुद्धस्वभाव से च्युत हुआ कि मेरा आत्मा मेरे को जानने में आता नहीं है, बस, वो अज्ञान हो गया। मेरा आत्मा मेरे को जानने में नहीं आता है। वो तो ज्ञानी को जानने में आवे, मैं तो अज्ञानी हूँ। नहीं! तू अज्ञानी नहीं है। तेरे अंदर में समय-समय पर उत्पाद-व्यय उपयोग लक्षण प्रगट होता है। ज्ञान प्रगट होता है। वो ज्ञान ज्ञायक से अनन्य होने से, आहाहा! निरंतर जानने में आ रहा है। नकार न कर, नकार न कर। हकार (कर) कि जाननेवाला जानने में आता है। जाननहार जानने में आता है (गुजराती में)। जाननहार जानने में आ रहा है। जानना नहीं है, जानने में आ रहा है। आहाहा! उपयोग में आत्मा जानने में आ रहा है। उसमें पुरुषार्थ की ज़रूरत नहीं। स्वीकार करे, उसका नाम पुरुषार्थ है।

मुमुक्षुः- आहाहा! बहुत अच्छा! स्वीकारने की ही बात है।

उत्तरः- उसमें पुरुषार्थ क्या? उपयोग में तो आत्मा जानने में सबको आ रहा है, वो तो स्वभाव है। हें? स्वीकार करना, उसका नाम पुरुषार्थ है। और नकार करना, स्वभाव से च्युत हो गया, मिथ्यात्व हुआ, तब दर्शनमोह के उदय को निमित्तकारण कहा जाता है। वो बाद की बात है।

मुमुक्षुः- आहाहा! निमित्तकारण की चर्चा करना नियमरूप कारण नहीं।

उत्तरः- हाँ! यहाँ प्रश्न पूछा है निमित्त का। वहाँ नैमित्तिक कब होता है? कि स्वभाव से च्युत हो तब। नैमित्तिक का कारण स्वभाव से च्युत। नैमित्तिक का कारण (स्वभाव से) च्युत होना, वो नियमरूप कारण है। आहाहा!

मुमुक्षुः- उसके बाद निमित्त।

उत्तरः- निमित्त की बात बाद में करो। आहाहा!

मुमुक्षुः- बाद, बाद की बात है।

उत्तरः- बाद की बात है।

मुमुक्षुः- ये तो अमृतचंद्र आचार्य भाई, ओहोहो!

उत्तरः- आहाहा! कितना आहाहा! गुरुदेव फ़रमाते थे कि ऐसी टीका 'न भूतो न भविष्यती'। भविष्य में भी ऐसी टीका (नहीं होगी)। आहाहा! गुरुकृपा है, गुरुकृपा।

अपनेको शुद्धस्वभावत्वके कारण रागादिका निमित्तत्व न होनेसे (स्वयं अपनेको रागादिरूप परिणमनका निमित्त न होनेसे), निमित्तकारण नहीं है आत्मा। **अपने आप ही रागादिरूप नहीं परिणमता।** नहीं, अपने आप रागरूप परिणमन नहीं होता है। यानि ये आत्मा राग का निमित्तकारण नहीं होता है। राग का निमित्तकारण पर है और राग नैमित्तिक (है)। कर्म का उदय निमित्त (है)। मगर नैमित्तिक का कारण क्या? कि (अपने) स्वभाव से च्युत होना है। **अपने आप ही रागादिरूप नहीं परिणमता, परंतु जो अपने आप** अपने आप **रागादिभावको प्राप्त होनेसे आत्माको रागादिका निमित्त होता है.....**निमित्त होता है, निमित्त होता है।

पर निमित्त होता है कभी? कि नैमित्तिक प्रगट हो तभी। नैमित्तिक कब प्रगट होता है? कि स्वभाव से च्युत होता है, तभी। मैं मेरे को नहीं जानता हूँ, मैं मेरे को नहीं जानता हूँ। मैं मेरे को नहीं जानता हूँ, उसका नाम अज्ञान, उसका नाम नैमित्तिक, उसका नाम मिथ्यात्व। तब दर्शनमोह का, कर्म का निमित्तकारण कहने में आता है। मत बोल, मैं मेरे को नहीं जानता हूँ, (ऐसा) मत बोल। आज से बंद कर दे। जाननहार (को) जानता हूँ, बस। जाननहार जानने में आ रहा है, समय-समय पर। ये तिर्यञ्च को भी, हिरण मेंढक, साँप, आहाहा! कीड़े-मकोड़े, सबको, भगवान आत्मा जानने में आ रहा है। बिना पुरुषार्थ जानने में आ रहा है। 'ना' कहे तो भी जानने में आवे, 'हाँ' कहे तो भी (जानने में आवे)। जानना छूटता नहीं, जानना छूटता नहीं और जानने में आना भी छूटता नहीं। जानना भी नहीं छूटता.... जानना भी नहीं छूटता, जानने में जो आ रहा है, वो भी छूटता नहीं है। जानन-क्रिया जानने को छोड़ती नहीं है और जानने में आनेवाला छूटता नहीं है। ऐसा संबंध है, ऐसा संबंध है। तात्विक संबंध है, वो छूटता नहीं है। ज्ञायक से ज्ञान जो छूटा हो जाये, तो ज्ञायक भी न रहे और ज्ञान भी नहीं रहे।

अपने आप ही रागादिरूप नहीं परिणमता, परंतु जो अपने आप, अपने आप, **रागादिभाव को प्राप्त होनेसे,** कर्म की बात है। कर्म में राग है। एक जड़ कर्म है, उसमें राग का अनुभाग है, निमित्त में। (और एक) इधर नैमित्तिक रागरूप होता है। नैमित्तिक रागरूप कब होता है? कि स्वभाव से च्युत होवे तब। तो राग उत्पन्न हुआ नैमित्तिक। तो नैमित्तिक राग हो, तो उसमें आत्मा निमित्त नहीं है। **'परसंग एव'** परपदार्थ निमित्त होता है। पर का लक्ष्य होता है। राग में पर का लक्ष्य जाता है, वीतरागभाव में स्व का लक्ष्य (है)।

परंतु जो अपने आप रागादिभावको प्राप्त होनेसे, आत्माको रागादिका निमित्त होता है, रागादि का निमित्त होता है वो उपादानकारण नहीं है। निमित्तकारण है। उपादानकारण तो अशुद्ध उपादान, क्षणिक-पर्याय, नैमित्तिक (है)। वो नैमित्तिक का कारण (है कि) मैं मेरे को नहीं जानता हूँ। मैं मेरे को नहीं जानता हूँ। ज्ञानी को आत्मा जानने में आवे, मैं तो अज्ञानी हूँ। मैं तो पढ़ा-लिखा नहीं हूँ। हमारी माता-बहिन कहें कि मैं तो क ख ग घ को जानती नहीं हूँ, A B C D भी जानती नहीं हूँ। मेरे को

आत्मा का ज्ञान (कैसे हो)? अरे! अभी आत्मा ही आत्मा, ज्ञान में जानने में आ रहा है। 'ना' मत कहो। 'ना' मत कहो।

सर्वज्ञ भगवान का फ़रमान है कि सब जीवमात्र के ज्ञान में भगवान आत्मा जानने में आ (ही) रहा है। आहाहा! सर्वज्ञ सीमंधर भगवान की वाणी में आया है, जाननेवाला ही जानने में आता है। आहाहा! जाननेवाला जानने में आयेगा, ऐसा नहीं आया। जानने का प्रयत्न करो, ऐसा भी नहीं। बिना प्रयत्न। आहाहा! सूर्य के प्रकाश में सूर्य प्रसिद्ध हो रहा है। आहाहा! सूर्य के प्रकाश में सूर्य अनन्य प्रसिद्ध हो रहा है। तो कोई कहे कि ये प्रकाश आया तो अभी मकान दिखा दिया, मकान। तो ये जो पर्याय है, (वो) च्युत हो गई। तो सूर्य के त्रिकालस्वभाव से च्युत हो गई। इससे संबंध तोड़ा और घड़े से सम्बन्ध जोड़ा। तो सूर्य भी नहीं रहा और प्रकाश भी नहीं रहा। मगर ऐसा बनता तो नहीं है। पीछे हट, पीछे हट, पीछे हट, हट, हट, पीछे हट कि ज्ञान में आत्मा जानने में आ रहा है। आहाहा! धर्म तो सरल है। अज्ञानी ने गड़बड़ कर दी (है), ऐसा करो, ऐसा करो। ये छोड़ो और ये ग्रहण करो और ये छोड़ो। आहाहा!

मुमुक्षुः- करो, करो, करो, करो, करो, करो।

उत्तरः- करो-करो में ही मर जाता है और कार्य सिद्धि होती नहीं है। जानूँ, जानूँ, जानूँ, ऐसा ले ना। करूँ-करूँ, जानूँ-जानूँ ले। अभी किसको जानूँ? जाननहार को जानूँ। बस, हो गया।

मुमुक्षुः- जो जानने में आ रहा है.....

उत्तरः- बस! जो जानने में आ रहा है, उसको जानूँ। आहाहा! जो जानने में आ रहा है, उसको जानूँ, ये भी उपदेश कथन है। उपदेश कथन है। समझे? बाकी तो जानने में आ ही रहा है। स्वीकार कर ले। 'हाँ' कर, तो हालत हो जाएगी। 'हाँ' तो पाड़, हालत हो जाएगी। इतनी देर है। तेरी देर में देर है, तेरी (देर में देर है)। आहाहा! ऐसी कहावत है, हमारे वहाँ, इधर भी होगी। 'तेरी देर में देर है', 'हाँ' तो पाड़। आहाहा!

मुमुक्षुः- हम तो तैयार हैं। हम तो तैयार हैं। पर तेरी देर में देर है।

उत्तरः- वाह! वाह! हाँ! हम तो तैयार हैं। दर्शन देने के लिये तैयार हैं, लेनेवाला चाहिए। लेता है, तो भगवान हो जाता है। भगवान के दर्शन से धर्म होता है, ये (अंदर के) भगवान के। आहाहा!

परंतु जो अपने आप रागादिभावको प्राप्त होनेसे, आत्माको रागादिका निमित्त होता है, ऐसे परद्रव्यके द्वारा ही, निमित्त-प्रधान कथन है। कर्ता-कर्म संबंध नहीं है, निमित्तकर्ता। निमित्तकर्ता के द्वारा यानि इससे नहीं। आत्मा से नहीं। इतना बताने के लिये उसके द्वारा कहा, उसमें मर्म है। हाँ! **ऐसे परद्रव्यके द्वारा ही, शुद्धस्वभावसे च्युत होता हुआ ही,** कोहिनूर का हीरा रख दिया (यहाँ पर)। आहाहा! ये कोहिनूर का हीरा है। शुद्धस्वभाव से च्युत होना, यानि मेरा आत्मा मेरे को जानने में नहीं आया। वो शुद्धस्वभाव से च्युत हो गया, भ्रष्ट हो गया। च्युत यानि भ्रष्ट हो गया, बाहर निकल गया। आहाहा! **रागादिरूप परिणमित किया जाता है। - ऐसा वस्तु स्वभाव है।**

मुमुक्षुः- आज बहुत बड़ी बात ली। भिण्ड का सार है।

उत्तरः- बराबर! ऐसी बात है। समझ में आ जाये। भिण्ड का सार है।

मुमुक्षुः- उपयोग को स्व-सन्मुख करो, वहाँ से हटाओ स्व-सन्मुख करो। वो तो आ ही रहा है, जानने में।

उत्तरः- वो तो समझाने की बात है। परसन्मुख उपयोग है, आत्मसन्मुख करो। उपदेश बहुत ऐसा ज्ञानी ने दिया।

मुमुक्षुः- ये मूल बात यहाँ से ली।

उत्तरः- मूल बात है। जिनवाणी की स्तुति बोलो!